दलपत

ये तपागच्छीय जैन साधु शान्तिविजय के शिष्य थे। इनका असली नाम दलपत था। परन्तु दीक्षा के बाद बदलकर दौलतविजय रख दिया गया था। हिंदी के विद्वानों ने मेवाड़ के रावळ खुमाण द्वितीय (सं. 870) का समकालीन होना अनुमानित किया है, जो गलत है। वास्तव में इनका रचनाकाल सं. 1730 और सं. 1760 के मध्य में है।[4]

इनका रचा 'खुमाण रासौ' एक प्रसिद्ध ग्रंथ है। इसमें बापा रावळ (सं.791) से लेकर महाराणा राजसिंह (सं. 1709-37) तक के मेवाड़ के राजाओं का वृत्तान्त है।

राणौ इक दिन राजसी, सह लै चढ्यौ शिकार।
गंग त्रिवेणी गोमती, अनड़ जू विचै अपार॥
नदी निरखी नागदहो, चिंतइ राजड़ राण।
नदी बँधाऊ नाम कर, (तो) हूँ सही हिंदवाण॥

परन्तु खुमाण का वृत्तान्त अधिक विस्तार से होने के कारण इसका नाम 'खुमाण रासौ' रखा गया है।

खुमाण रासौ आठ खंडों में विभाजित है। इसकी भाषा पिंगल है। रचना इस प्रकार की है—

कवित्त

आव भाव अंबाव, भगति कीजै भारत्ति।
जाग जाग जगदंब, संत सानिध सकत्ति।
प्रसन होय सुरराय, वयण वाचा वर दीजै।
बालक बेलें बाँह, प्रीत भर प्यालो पीजै॥
महाराज राज-राजेश्वरी, दलपति सूं कीजै दया।
धन मौज महिर मातंगिनी, माय करौ मोसूं मया॥
भृकुटि चंद भलहळै गंग खळहळै समुज्जळ।
एकदंत उज्जळो, सुंड ललवळै रुंड गळ।

4. नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष 44 पृ. 387–398

Scanned by CamScanner

पुहप धूप प्रम्मळै, सेस सलवलै जीह लल।
धूम्र नेत्र परजळै, अंग अक्कलै अतुल बल॥
यम वलें विधन दाळिद अलग, चमर ढळें उज्जळ कमळ।
सुंडाळ देव रिध सिध दियण, सुमर दल्ल गणपति भवळ॥

नल्लसिंह

नल्लसिंह का प्रामाणिक इतिवृत्त नहीं मिलता। इनके नाम से प्रचलित 'विजयपाल रासौ' से सूचित होता है कि ये सिरोहिया शाखा के भाट और विजयगढ़ (करौली राज्य) के यदुवंशी नरेश विजयपाल के आश्रित थे जिन्होंने इनको हिंडोन नामक एक नगर, सौ गाँव, हाथी, घोड़े रत्नादि इनाम में दिए थे—

भये भट्ट प्रथु यज्ञ तैं, है सिरोहिया अल्ल।
वृत्तेश्वर जदुवंस के, नल्ल पल्ल दल सल्ल॥
बीसा सौ गजराज, वाजि सोलह सौ माते।
दिये सात सौ ग्राम, सहर हिंडोन सुदाते॥
सुतर दिये द्वै सहस रकम गिलमैं भरि अम्बर।
कंचन रत्न जड़ाव बहुत दीनेजु अडम्बर॥
कुल पूजित राव सिरोहिया, यादवपति निज सम कियव।
नृप विजयपाल जू विजयगढ़, साह ये जू सम्मपियव॥

विजयपाल रासौ का थोड़ा-सा अंश उपलब्ध हुआ है जिसमे महाराजा विजयपाल की दिग्विजय और पंग की लड़ाई का वर्णन है। इस युद्ध का समय नल्लसिंह ने सं.1093 बतलाया है। ग्यारहवीं शताब्दी में करौली पर विजयपाल नाम के एक प्रतापी राजा हुए हैं जिनका करौली और उनके आसपास के अलवर, भरतपुर, धौलपुर आदि राज्यों के कुछ भागों पर अधिकार था[4]। परन्तु गजनी, ईरान, काबुल, दिल्ली, ढूंढाड़, अजमेर आदि पर विजयपाल का एक-छत्र राज्य होने की बात नल्लसिंह ने अपने इस ग्रंथ में लिखी है वह इतिहास-विरुद्ध और अतिरंजना है—

बैठइ पाट विजयपाल वीर, अल्लीखाँन जीत्यौ गहीर।
इक लक्ष मीर दहवट्ट कीन, रो राख रिद्धि सब खोसि लीन॥
साहिब्बदीन गजनी हँकारि, तत्तारखाँन को मान मारि।
खुरासान खग्गनि सरत्ति जीति, राखी सुढेक सद्दव सुरीति॥
तेगन अमोरि तूरान तोरि, ईरान पेसकस लीन मोरि॥
बरछीनि मारि वंगस उजारि, खन्धार कोट सब दीय पारि।
काबिली किलंगी रोह जाति, राखिय नरेन्द्र हिन्दुवान रीति।
बलकी बुखार सब जेर कीन, खुरसान खोसि हवसान लीन॥

आरबी बुखार लटियाल कूटि, फिरगाँन देस दुइ वार लूटि।
लीनीस पेसकस अवर देश, राखियौ धर्म जद्दव नरेश॥
पांचाल देश बयराट मारि, अजमेर सोम कौ गर्व गारि।
मंडोवर कौ परिहार डंडि, जोइया पारस खग्गनि खंडि॥
तौंवर अनंग दिल्ली सुमाँनि, थापियौ थान सगपन्न जानि।
ढूंढाहर मइँ हय खुरनि गाहि, पज्जूनि करत निज सेन चाहि॥
मेवात मरूस्थल मद्दि लीन, उतराध पंथ सब जेर कीन।
इहि तेज तपि विजयपाल राज, जाहराँ तेग जादव समाज॥

इस वर्णन से स्पष्ट है विजयपाल रासौ विजयपाल के समय की रचना नहीं है। मिश्रबंधुओं ने इसका रचनाकाल सं. 1355 के आस पास माना है। परन्तु ग्रंथ उतना भी पुराना नहीं है। इसकी भाषा-शैली पर 'पृथ्वीराज-रासौ'(18 वीं शताब्दी) और 'वंशभास्कर '(सं. 1897) दोनों का प्रभाव साफ झलकता है। अतः सं. 1900 के आसपास यह रचा गया है, पर प्राचीन बतलाने के लिए इसके रचयिता ने नल्लसिंह का कल्पित परिचय इसमें जोड़ दिया है जिसका उल्लेख ऊपर हो चुका है।

विजयपाल-रासौ पिंगल का ग्रंथ है। सब मिलाकर उसमें 42 छंद हैं-8 छप्पय, 18 मोतीदाम, 8 पद्धरि, 6 दोहे और 2 चौपाइयाँ। इसकी वर्णन-शैली सजीव और चित्ताकर्षक है। वीर रस का इसमें अच्छा परिपाक दृष्टिगोचर होता है।

विजयपाल रासौ का थोड़ा-सा अंश यहाँ दिया जाता है—

छंद मोतीदाम

जुरै जुध यादव पंग मरद्द, गही कर तेग चढ्यौ रणमद्द।
हंकारिय जुद्ध दुहूँ दल शूर, मनौं गिरि शीस जल्लथरि पूर॥
हलौं हिल हाँक बजी दल मद्धि, भई दिन ऊगत कूक प्रसिद्धि।
परस्पर तोप बहैं विकराल, गजैं सुर भुम्मि सरग्ग पताल॥
लगैं वर यंत्रिय छत्तिय शुद्ध, गिरै भुवभार अपार विरुद्ध।
बहैं भुववांन ढँख्यौ असमान, खयंजर खेचर पाव न जान॥
बहैं कर सायक यायक जंग, लखै विष आशिय पासिय अंग।
बहैं भिड़पालक पाल लगंत, उड़ै शिर ढीव धरन्नि पतंग॥
बहैं कर संकुल शीस निसार, परैं विकराल बेंवार सुमार।
बंहत गुरज्ज गहन्त मरद्द, भये शिर चून विखू न गरद्द।
मुदग्गर मार बहैं बिकराल, लटंकत भुम्मि फटन्त कपाल।
बहैं कर कत्तिय मत्तिय मार, गिरैं धर मध्य प्रसिद्धि जुझार॥

Scanned by CamScanner

लगैं उर सांगिसु कंगल पार, लटक्कत शूर चटक्क कुठार।
लगैं किरवान मुकन्द कुत्तार कटै वर हड्डु जनेनु उतार।
लगैं खपुवा जमडाड़ सुमार, किधौं खिरकी दिय छुट्टत द्वार॥
बहैं कर खंजर पंजर भीर, मनौं मत बात करैं मुड चीर॥
बहैं कर रज्जक गज्जक हाल, निकस्सत वंवित्थ फोरि सुव्याल।
कटक्क कुटन्त गिरंत कपाल, खटकक्त खाग चलैं रत खाल॥
गटक्कत गोठिय गिद्धनि गाल, घुटक्कत जुग्गिनि घुण्ड कपाल।
नदन्निमि नाचय सांवत नांच, चटक्कत चूरि कि रंचत आंच॥

नरपति

नरपति नाल्ह कृत 'बीसलदेव रासौ ' की हिन्दी संसार में बड़ी चर्चा है। परन्तु इनके व्यक्तिगत जीवन के विषय में हमारी जानकारी प्रायः नहीं के बराबर है। कोई इन्हें राजा और कोई भाट बतलाते हैं। परन्तु ये सब ही अनुमान है। कोई सुदृढ़ ऐतिहासिक आधार अभी तक उपलब्ध नहीं हुआ है। लेकिन बीसलदेव रासौ में इन्होंने अपने लिए दो-एक स्थानों पर 'व्यास' शब्द का प्रयोग किया है जिससे इनकी जाति पर प्रकाश पड़ता है—

"**व्यास** वचन इम ऊचरई, दिन दिन प्रतिपै बीसलराई।"

प्रथम खंड, छंद 69

"नरपति **व्यास** कइ करि जोड़ि, तौ तूठा तैंतिसौ कोड़ि।"

प्रथम खंड, छंद 84

"चउरास्या सहू वर्णव्या, अम्रत रसायण नरपति **व्यास**।"

तृतीय खंड, छंद 103

व्यास जाति राजस्थान में ब्राह्मण जाति के अन्तर्गत मानी जाती है और इसी का दूसरा नाम सेवग या भोजग जाति है। अतः नरपति का ब्राह्मण होना स्पष्ट है। इसके नाम से साथ 'नाल्ह'जो लिखा मिलता है वह यदि हस्तलिखित प्रतियों में ठीक तरह से पढ़ा गया हो तो इनका अवटंक मालूम देता है।

बीसलदेव रासौ की पन्द्रह के लगभग हस्तलिखित प्रतियों का पता है। इनमें सबसे प्राचीन प्रति सं. 1669 की लिखी हुई है। भिन्न-भिन्न प्रतियों में इसका रचनाकाल भिन्न-भिन्न् लिखा मिलता है—

"संवत् सहस तिहुतरह जाँणि"।
"संवत् सहस सतिहतरह जाँणि, नाल्ह कवीसर सरसीय वाणि"।

"संवत् बार बरोतरां मझारि जेठ वदि नवमी बुधवार"।
"संवत् तेर सतोतरइ जाणि"।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित संस्करण में इसका निर्माण-काल सं. 1272 दिया हुआ है—

"बारह सै बहोतराहाँ मँझारि, जेठ वदी नवमी बुधवारि।"

प्रथम सर्ग, छंद 9

परन्तु ये सभी संवत् प्रक्षिप्त हैं। वास्तव में बीसलदेव रासौ इतना पुराना नहीं है। 'बारहसै बहोतराहाँ 'का अर्थ कुछ लोगों ने 1212 किया है और इस अशुद्ध अर्थ के आधार पर उन्होंने नरपति को बीसलदेव रासौ के चरित्र नायक अजमेर के चौहाण राजा बीसलदेव अर्थात् विग्रहराज चतुर्थ के समकालीन माना है जिनका शासनकाल सं. 1210-1221 है। परन्तु नरपति को विग्रहराज चतुर्थ का सम्सामयिक नहीं माना जा सकता। कारण, बीसलदेव रासौ में इतिहास संबंधी अनेक ऐसी भूलें विद्यमान हैं जिनका समकालीन कवि की रचना में होना असंभव है। यथा—

(1) बीसलदेव रासौ में बीसलदेव का धार के परमार राजा भोज की लड़की राजमती से विवाह होना लिखा है। परन्तु बीसलदेव और भोज का समकालीन होना इतिहास से सिद्ध नहीं होता। इतिहासकारों ने भोज का राज्यकाल सं. 1069-1112 निश्चित किया है। अतः भोज और बीसलदेव के समय में लगभग 110 वर्ष का अन्तर है।

(2) बीसलदेव रासौ में कालिदास और माघ को बीसलदेव का समकालीन कहा गया है जो बीसलदेव से बहुत पहले हुए हैं।

(3) बीसलदेव रासौ में लिखा है कि भोज ने बीसलदेव को आलीसर, कुडाल, मंडोवर, गुजरात, सोरठ, साँभर, टोंक, तोड़ा, चित्तोड़ आदि प्रदेश दहेज में दिये थे। परन्तु इन प्रदेशों का भोज के अधीन होना इतिहास से प्रकट नहीं होता।

(4) बीसलदेव रासौ में जैसलमेर और बूंदी के नाम आये हैं। परन्तु तब तक ये नगर बसे भी न थे।

(5) बीसलदेव रासौ में बीसलदेव के उड़ीसा जीतने की बात कही गई है जिसका समर्थन बीसलदेव के शिलालेखों तथा अन्य ऐतिहासिक सूत्रों से नहीं होता। अजमेर में बीसलदेव नाम के चार राजा हुए हैं। इनमें से किसी ने उड़ीसा नहीं जीता।

(6) बीसलदेव रासौ में बीसलदेव का अपने भतीजे को अपना अत्राधिकारी नियत करना लिखा है जो गलत है। बीसलदेव के बाद उनका बेटा अमरगांगेय उनकी गद्दी पर बैठा था।

इसके अतिरिक्त बीसलदेव रासौ की भाषा भी तेरहवीं शताब्दी की नहीं प्रत्युत सोलहवीं शताब्दी की है। भाषा संबंधी गड़बड़ी का कारण कुछ विद्वानों ने यह बतलाया है कि बीसलदेव रासौ एक गीतकाव्य है और सैकड़ों वर्षों तक लोगों की जबान पर रहने से इसकी भाषा में

Scanned by CamScanner

चंद

चन्द बरदाई की जीवनी इतिहास की एक उलझी हुई पहेली है। अधुना प्रचलित पृथ्वीराज रासौ में जो बातें इनके विषय में लिखी मिलती हैं, वे सब संदिग्ध हैं। इनकी बड़ी ख्याति को देखकर राजस्थान में आज कई ऐसे व्यक्ति उठ खड़ें हुए है जो अपने को चंद का वंशज बतलाते हैं। इनमें के कुछ ने नकली वंशावलियाँ भी बना ली हैं जिन पर विश्वास लाना भारी भूल है।

परम्परा से प्रसिद्ध है कि चन्द जाति के राव थे। रासौ में इनका जन्म लाहौर में होना लिखा है—

बलिभद्र सु नागौर, चंद अपज्जि लाहौरह।

आदि सम्यो,[8] छंद 103

---

8. अध्याय अथवा सर्ग के लिए पृथ्वीराज रासौ की प्राचीन लिखित कुछ प्रतियों में 'प्रस्ताव' और कुछ में 'सम्यो' शब्द का प्रयोग देखने में आता है। 'सम्यो' शब्द एक वचन है। इसका बहु वचन 'सम्याँ' होता है। राजस्थान में यह फारसी शब्द 'जमाना' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। जैसे 'काल रो सम्यो', 'खोटा सम्याँ आया' इत्यादि। परन्तु हिन्दी के कुछ विद्वान 'सम्यो' (एक वचन)के स्थान पर 'समय' और 'सम्याँ (बहु वचन) के स्थान पर 'समयो' का प्रयोग करते हैं जो गलती है। वास्तव में 'सम्यो' का 'समय' से कोई संबंध नहीं है। ये दो भिन्न शब्द हैं। इनके अर्थ में उतना ही अन्तर है जितना क्रमशः इनके पर्यायवाची अंग्रेजी शब्द (Period) और (Time) में है।

Scanned by CamScanner